# बी.ए.प्रथम वर्ष
# बिहारी की काव्यगत विशेषता

बिहारीलाल का जन्म संवत् 1603 ई. ग्वालियर में हुआ। वे जाति के माथुर चौबे (चतुर्वेदी) थे। उनके पिता का नाम केशवराय था। जब बिहारी 8 वर्ष के थे तब इनके पिता इन्हे ओरछा ले आये तथा उनका बचपन बुंदेलखंड में बीता। इनके गुरु नरहरिदास थे और युवावस्था ससुराल मथुरा में व्यतीत हुई, जैसे की निम्न दोहे से प्रकट है -जन्म ग्वालियर जानिये खंड बुंदेले बाल। तरुनाई आई सुघर मथुरा बसि ससुराल॥

जयपुर-नरेश सवाई राजा जयसिंह अपनी नयी रानी के प्रेम में इतने डूबे रहते थे कि वे महल से बाहर भी नहीं निकलते थे और राज-काज की ओर कोई ध्यान नहीं देते थे। मंत्री आदि लोग इससे बड़े चिंतित थे, किंतु राजा से कुछ कहने को शक्ति किसी में न थी। बिहारी ने यह कार्य अपने ऊपर लिया। उन्होंने निम्नलिखित दोहा किसी प्रकार राजा के पास पहुंचाया -नहिं पराग नहिं मधुर मधु, नहिं विकास यहि काल। अली कली ही सौं बंध्यो, आगे कौन हवाल॥[1]

इस दोहे ने राजा पर मंत्र जैसा कार्य किया। वे रानी के प्रेम-पाश से मुक्त होकर पुनः अपना राज-काज संभालने लगे। वे बिहारी की काव्य कुशलता से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने बिहारी से और भी दोहे रचने के लिए कहा और प्रति दोहे पर एक स्वर्ण मुद्रा देने का वचन दिया। बिहारी जयपुर नरेश के दरबार में रहकर काव्य-रचना करने लगे, वहां उन्हें पर्याप्त धन और यश मिला।

बिहारी की एकमात्र रचना सतसई (सप्तशती) है। यह मुक्तक काव्य है। इसमें 719 दोहे संकलित हैं। कतिपय दोहे संदिग्ध भी माने जाते हैं। सभी दोहे सुंदर और सराहनीय हैं तथापि तनिक विचारपूर्वक बारीकी से देखने पर लगभग 200 दोहे अति उत्कृष्ट ठहरते हैं। 'सतसई' में ब्रजभाषा का प्रयोग हुआ है। ब्रजभाषा ही उस समय उत्तर भारत की एक सर्वमान्य तथा सर्व-कवि-सम्मानित ग्राह्य काव्यभाषा के रूप में प्रतिष्ठित थी। इसका प्रचार और प्रसार इतना हो चुका था कि इसमें अनेकरूपता का आ जाना सहज संभव था। बिहारी ने इसे एकरूपता के साथ रखने का स्तुत्य सफल प्रयास किया और इसे निश्चित साहित्यिक रूप में रख दिया। इससे ब्रजभाषा मँजकर निखर उठी। इस सतसई को तीन मुख्य भागों में विभक्त कर सकते हैं- नीति विषयक, भक्ति और अध्यात्म भावपरक, तथा । श्रृंगारपरक। इनमें से श्रृंगारात्मक भाग अधिक है। कला-चमत्कार सर्वत्र चातुर्य के साथ प्राप्त होता है।

श्रृंगारात्मक भाग में रूपांग सौंदर्य, सौंदर्योपकरण, नायक-नायिकाभेद तथा हाव, भाव, विलास का कथन किया गया है। नायक-नायिका निरूपण भी मुख्त: तीन रूपों में मिलता है- प्रथम रूप में नायक कृष्ण और नायिका राधा है। इनका चित्रण करते हुए धार्मिक और दार्शनिक विचार को ध्यान में रखा गया है। इसलिए इसमें गूढ़ार्थ व्यंजना प्रधान है, और आध्यात्मिक रहस्य तथा धर्म-मर्म निहित है; द्वितीय रूप में राधा और कृष्ण का स्पष्ट उल्लेख नहीं किया गया किंतु उनके आभास की प्रदीप्ति दी गई है और कल्पनादर्श रूप रौचिर्य रचकर आदर्श चित्र विचित्र व्यंजना के साथ प्रस्तुत किए गए हैं। इससे इसमें लौकिक वासना का विलास नहीं मिलता। तृतीय रूप में लोकसंभव नायक नायिका का स्पष्ट चित्र है। इसमें भी कल्पना कला कौशल और कवि परंपरागत आदर्शों का पुट पूर्ण रूप में प्राप्त होता है। नितांत लौकिक रूप बहुत ही न्यून और बहुत ही कम है।

सतसई' के मुक्तक दोहों को क्रमबद्ध करने के प्रयास किए गए हैं। २५ प्रकार के क्रम कहे जाते हैं जिनमें से १४ प्रकार के क्रम देखे गए हैं, शेष ११ प्रकार के क्रम जिन टीकाओं में हैं, वे प्राप्त नहीं। किंतु कोई निश्चित क्रम नहीं दिया जा सका। वस्तुत: बात यह जान पड़ती है कि ये दोहे समय-समय पर मुक्तक रूप में ही रचे गए, फिर चुन चुनकर एकत्रित कर संकलित कर दिए गए। केवल मंगलाचरणात्मक दोहों के विषय में भी इसी से विचार वैचित्य है। यदि 'मेरी भव बाधा हरौ' इस दोहे को प्रथम मंगलाचरणात्मक अर्थात् केवल राधोपासक होने का विचार स्पष्ट होता है और यदि 'मोर मुकुट कटि काछिनि'-इस दोहे को लें, तो केवल एक विशेष बानकवाली कृष्णमूर्ति ही बिहारी की अभीष्टोपास्य मूर्ति मुख्य ठहरती हैं - बिहारी वस्तुत: कृष्णोपासक थे, यह स्पष्ट है।सतसई के देखने से स्पष्ट होता है कि बिहारी के लिए काव्य में रस और

अलंकार चातुर्य चमत्कार तथा कथन कौशल दोनों ही अनिवार्य और आवश्यक हैं। उनके दोहों को दो वर्गों में इस प्रकार भी रख सकते हैं, एक वर्ग में वे दोहे आएँगें जिनमें रस रौचिर्य का प्राबल्य है और रसात्मकता का ही विशेष ध्यान रखा गया है। अलंकार चमत्कार इनमें भी है किंतु विशेष प्रधान नहीं, वरन् रस परिपोषकता और भावोत्कर्षकता के लिए ही सहायक रूप में यह है।

दूसरे वर्ग में वे दोहे हैं जिनमें रसात्मकता को विशेषता नहीं दी गई वरन् अलंकार चमत्कार और वचनचातुरी अथवा कथन-कलाकौशल को ही प्रधानता दी गई है। किसी विशेष अलंकार को उक्तिवैचित्र्य के साथ सफलता से निबाहा गया है। इस प्रकार देखते हुए भी यह मानना पड़ता है कि अलंकार चमत्कार को कहीं नितांत भुलाया भी नहीं गया। रस को उत्कर्ष देते हुए भी अलंकार कौशल का अपकर्ष भी नहीं होने दिया गया। इस प्रकार कहना चाहिए कि बिहारी रसालंकारसिद्ध कवि थे; रससिद्ध ही नहीं।

नीति विषयक दोहों में वस्तुत: सरसता रखना कठिन होता है, उनमें उक्तिऔचित्य और वचनवक्रता के साथ चारु चातुर्य चमत्कार ही प्रभावोत्पादक और ध्यानाकर्षण में सहायक होता है। यह बात नीतिपरक दोहों में स्पष्ट रूप से मिलती है। फिर भी बिहारी ने इनमें सरसता का सराहनीय प्रयास किया है।

ऐसी ही बात दार्शनिक सिद्धांतों और धार्मिक भाव मर्मों के भी प्रस्तुत करने में आती है क्योंकि उनमें अपनी विरसता स्वभावत: रहती है। फिर भी बिहारी ने उन्हें सरसता के साथ प्रस्तुत करने में सफलता पाई है।

भक्ति के हार्दिक भाव बहुत ही कम दोहों में दिखाई पड़ते हैं। समयावस्था विशेष में बिहारी के भावुक हृदय में भक्तिभावना का उदय हुआ और उसकी अभिव्यक्ति भी हुई। बिहारी में दैन्य भाव का प्राधान्य नहीं, वे प्रभु प्रार्थना करते हैं, किंतु अति हीन होकर नहीं। प्रभु की इच्छा को ही मुख्य मानकर विनय करते हैं।

बिहारी ने अपने पूर्ववर्ती सिद्ध कविवरों की मुक्तक रचनाओं, जैसे आर्यासप्तशती, गाथासप्तशती, अमरुकशतक आदि से मूलभाव लिए हैं- कहीं उन भावों को काट छाँटकर सुंदर रूप दिया है, कहीं कुछ उन्नत किया है और कहीं ज्यों का त्यों ही सा रखा है। सौंदर्य यह है कि दीर्घ भावों को संक्षिप्त रूप में रम्यता के साथ अपनी छाप छोड़ते हुए रखने का सफल प्रयास किया गया है

'सतसई' पर अनेक कवियों और लेखकों ने टीकाएँ लिखीं। कुल ५४ टीकाएँ मुख्य रूप से प्राप्त हुई हैं। रत्नाकर जी की बिहारी रत्नाकर नामक एक अंतिम टीका है, यह सर्वांग सुंदर है। सतसई के अनुवाद भी संस्कृत, उर्दू (फारसी) आदि में हुए हैं और कतिपय कवियों ने सतसई के दोहों को स्पष्ट करते हुए कुंडलिया आदि छंदों के द्वारा विशिष्टीकृत किया है। अन्य पूर्वापरवर्ती कवियों के साथ भावसाम्य भी प्रकट किया गया है। कुछ टीकाएँ फारसी और संस्कृत में लिखी गईं हैं। टीकाकारों ने सतसई में दोहों के क्रम भी अपने अपने विचार से रखे हैं। साथ ही दोहों की संख्या भी न्यूनाधिक दी है। यह नितांत निश्चित नहीं कि कुल कितने दोहे रचे गए थे। संभव है, जो सतसई में आए वे चुनकर आए कुल दोहे ७०० से कहीं अधिक रचे गए होंगे। सारे जीवन में बिहारी ने इतने ही दोहे रचे हों, यह सर्वथा मान्य नहीं ठहरता।

सतसई' पर कतिपय आलोचकों ने अपनी आलोचनाएँ लिखी हैं। रीति काव्य से ही इसकी आलोचना चलती आ रही है। प्रथम कवियों ने सतसई की मार्मिक विशेषता को सांकेतिक रूप से सूचित करते हुए दोहे और छंद लिखे। उर्दू के शायरों ने भी इसी प्रकार किया। यथा :

सतसइया के दोहरे, ज्यों नावक के तीर।

देखत मैं छोटे लगैं, घाव करैं गंभीर॥

बिहारी की बलागत और ब्रजभाषा की शीरीनी हमें तारीफ़ करने के लिए मजबूर करती है॥

इस प्रकार की कितनी ही उक्तियाँ प्रचलित हैं। विस्तृत रूप में सतसई पर आलोचनात्मक पुस्तकें भी इधर कई लिखी गई हैं। साथ ही आधुनिक काल में इसकी कई टीकाएँ भी प्रकाशित हुई हैं। इनकी तुलना विशेश रूप से कविवर देव से की गई और एक ओर देव को, दूसरी ओर बिहारी को बढ़कर सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया। दो पुस्तकें, 'देव और बिहारी' पं. कृष्णबिहारी मिश्र लिखित तथा 'बिहारी और देव' लाला

भगवानदीन लिखित उल्लेखनीय है 'बिहारी रत्नाकर' नामक टीका और 'कविवर बिहारी' नामक आलोचनात्मक विवेचन बिहारी की कविता का मुख्य विषय श्रृंगार है। उन्होंने श्रृंगार के संयोग और वियोग दोनों ही पक्षों का वर्णन किया है। संयोग पक्ष में बिहारी ने हावभाव और अनुभवों का बड़ा ही सूक्ष्म चित्रण किया हैं। उसमें बड़ी मार्मिकता है। -

बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाय।

सोह करे, भौंहनु हंसे दैन कहे, नटि जाय॥

बिहारी का वियोग वर्णन बड़ा अतिशयोक्ति पूर्ण है। यही कारण है कि उसमें स्वाभाविकता नहीं है, विरह में व्याकुल नायिका की दुर्बलता का चित्रण करते हुए उसे घड़ी के पेंडुलम जैसा बना दिया गया है -

इति आवत चली जात उत, चली, छसातक हाथ।

चढी हिंडोरे सी रहे, लगी उसासनु साथ॥

सूफी कवियों की अहात्मक पद्धति का भी बिहारी पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। वियोग की आग से नायिका का शरीर इतना गर्म है कि उस पर डाला गया गुलाब जल बीच में ही सूख जाता है -

औंधाई सीसी सुलखि, बिरह विथा विलसात।

बीचहिं सूखि गुलाब गो, छीटों छुयो न गात॥

भक्ति-भावना  संपादित करें

बिहारी मूलतः श्रृंगारी कवि हैं। उनकी भक्ति-भावना राधा-कृष्ण के प्रति है और वह जहां तहां ही प्रकट हुई है। सतसई के आरंभ में मंगला-चरण का यह दोहा राधा के प्रति उनके भक्ति-भाव का ही परिचायक है -

मेरी भव बाधा हरो, राधा नागरि सोय।

जा तन की झाई परे, स्याम हरित दुति होय॥

बिहारी ने नीति और ज्ञान के भी दोहे लिखे हैं,

मति न नीति गलीत यह, जो धन धरिये जोर।

खाये खर्चे जो बचे तो जोरिये करोर

प्रकृति-चित्रण  संपादित करें

प्रकृति-चित्रण में बिहारी किसी से पीछे नहीं रहे हैं। षट ऋतुओं का उन्होंने बड़ा ही सुंदर वर्णन किया है। ग्रीष्म ऋतु का चित्रण

कहलाने एकत बसत अहि मयूर मृग बाघ।

जगत तपोतवन सो कियो, दारिग़ दाघ निदाघ॥

बिहरि गाव वालो कि अरसिक्त का उपहास करते हुए कहते हैं-

कर फुलेल को आचमन मीठो कहत सराहि।

रे गंधी मतिअंध तू इत्र दिखावत काहि॥

बहुज्ञता संपादित करें

**बिहारी को ज्योतिष, वैद्यक, गणित, विज्ञान आदि विविध विषयों का बड़ा ज्ञान था।**

**कहत सवै वेदीं दिये आंगु दस गुनो होतु।**

**बिहारी की भाषा साहित्यिक ब्रज भाषा है। इसमें सूर की चलती ब्रज भाषा का विकसित रूप मिलता है। पूर्वी हिंदी, बुंदेलखंडी, उर्दू, फ़ारसै आदि के शब्द भी उसमें आए हैं, किंतु वे लटकते नहीं हैं। बिहारी का शब्द चयन बड़ा सुंदर और सार्थक है। शब्दों का प्रयोग भावों के अनुकूल ही हुआ है और उनमें एक भी शब्द भारती का प्रतीत नहीं होता। बिहारी ने अपनी भाषा में कहीं-कहीं मुहावरों का भी सुंदर प्रयोग किया है। जैसे -**

**मूड चढाऐऊ रहै फरयौ पीठि कच-भारु।**

**रहै गिरैं परि, राखिबौ तऊ हियैं पर हारु॥**

डॉ0 वन्दना
असिस्टेन्ट प्रोफेसर–हिन्दी